बाल-साहित्य-माला—४

बाल भारती

बालक-बालिकाओं के लिये सुन्दर राष्ट्रीय कविताएँ

श्रीनाथसिंह

२००६

हिन्दी साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग

समर्पण

स्वर्गीय राधाचरण दुबे

[राय साहब पंडित रामनरेश दुबे के ज्येष्ठ पुत्र जिनके लिए इनमें से अधिकांश कविताएँ लिखी गई थीं ।]

की पुण्यस्मृति में

निवेदन

मुजफ्फरपुर हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के अवसर पर श्री वियोगी **हरि** को उनके 'वीर-सतसई' नामक काव्य-ग्रन्थ पर जो १२००) का मंगलाप्रसाद पारितोषिक प्रदान किया गया था, उसे उन्होंने अपनी ओर से सम्मेलन को दान कर दिया था; और यह इच्छा प्रकट की थी कि श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन, पं० पद्मसिंह शर्मा और डा० भगवानदास इन रुपयों को जिस कार्य में लगाना चाहें उसमें व्यय करें। इन तीनों सज्जनों ने सर्व-सम्मति से यह निश्चय किया कि श्री वियोगी हरि की दी हुई १२००) की पूँजी वीर-रस-पूर्ण बाल-साहित्य के प्रकाशन में लगाई जाय और प्रकाशित पुस्तकों की आय से यह कार्य बराबर जारी रखा जाय। इसमें श्री वियोगी हरि की भी सम्मति थी।

इस माला की यह चौथी पुस्तक है। इसका पाँचवाँ संस्करण पाठकों के सामने उपस्थित करते हुए हमें हर्ष हो रहा है।

साहित्य मंत्री

पंचम संस्करण :: २००० :: मूल्य

भूमिका

राजपूत के घर में पैदा होने के कारण वीररस की चर्चा मैं बचपन ही से सुनता आ रहा हूँ। मुझको बताया गया था कि मारना और मरना यही राजपूत के दो काम हैं। इसलिए मैं ऐसे अवसर बचपन में बराबर ढूँढ़ा करता था जब मैं खुद किसी को मारूँ या वह मुझे मारे। किसी को पीटने पर या किसी के हाथ से पिटने पर दोनों ही हालत में मजा आता था। इस तरह मैं बाल-मित्रों के साथ मार-पीट, दङ्गा फ़साद करता हुआ बड़ा हुआ।

अठारह वर्ष तो मजे में बीते, लेकिन जब मैंने उन्नीसवें वर्ष में पदार्पण किया तब जान पड़ा कि अब जिन्दगी के दिन फिजूल कट रहे हैं। क्योंकि मेरे कान में किसी अल्हैत के ये वाक्य गूँज रहे थे—

बरिस अठारह क्षत्रिय जीवे आगे जीवे को धिक्कार।

रह-रह कर यही सवाल उठने लगा कि अब प्राण कैसे दूं। एक रोज तो यहाँ तक मन में आया कि चलती रेलगाड़ी में से कूद पड़ूँ। उन दिनों सन् १४-१८ वाला जर्मन युद्ध छिड़ा था। मेरे गाँव के बाल-मित्र एक-एक करके फौज में भर्ती होकर फ्रान्स के रण क्षेत्र में कटने-काटने जा रहे थे। बड़ी कोशिशों के बाद मैं भी फौज में भर्ती हुआ, लेकिन सौभाग्य से या दुर्भाग्य से लड़ाई बन्द हो गई और मुझे फिर ग्लानि का शिकार होना पड़ा। मैंने फैसला कर लिया कि मैं कायर हूँ।

महायुद्ध के बाद ही महात्मा गाँधी का असहयोग-आन्दोलन छिड़ा। देश के लिए प्राण देने वालों की फिर पुकार हुई। फौरन मैं वालंटियर बन गया, लेकिन आदेश सिर्फ मरने का था, मारने का नहीं। मैंने गाँधी जी के और नेताओं के उपदेश सुने। उन उपदेशों से वीर रस के बारे में मेरा दृष्टिकोण बदल गया और तब मेरी समझ में आया कि क्षत्रिय

जो बहादुर माना जाता है वह इसलिए नहीं कि वह मारता है, बल्कि इसलिए कि मरने का जोखिम उठाने को तैयार रहता है। किसी ध्येय को सामने रखकर प्राण दे देना ही सच्ची वीरता है। उस समय मैंने अनुमान किया कि किसी राजा की तोप, तलवार, किसी सरदार की मूँछ या किसी घोड़े की पूँछ का वर्णन वीररस नहीं है. वीररस है देश के नौजवानों में स्वदेश की स्वतन्त्रता के लिए लड़ने का भाव जाग्रत करना! उस समय यद्यपि मैं शरीर से बड़ा हो गया था तथापि मन से बच्चा ही था और बच्चों का मेरा साथ भी था। आखिर स्कूल का विद्यार्थी ही तो था। इसलिए मैंने अपनी ही बाल-मण्डली को उभाड़ने के लिए कुछ तुक जोड़े। बाद को उन्हें 'शिशु' और 'बालसखा' में छापने की इच्छा हुई। जब दो एक तुकबन्दियाँ छापीं तब और भी लिखने का शौक हुआ। शौक यहाँ तक बढ़ा कि मैं इन पत्रों का सम्पादक ही बन बैठा और अब तक यह नाव खेये जा रहा हूँ।

ये कविताएं सन् १९२४ से १९४० के बीच की हैं। इन पर उस समय के राष्ट्रीय विचारों की छाप है। इन्हें मैंने इन्हीं तरह की सैकड़ों तुकबन्दियों में से छाँट कर निकाला है। यह इसलिए कि हिन्दी साहित्य-सम्मेलन के वर्तमान साहित्य मन्त्री मेरे मित्र श्री ज्योतिप्रसाद मिश्र 'निर्मल' ने मुझे उत्साहित किया कि ये वीररस के अन्तर्गत आ सकती हैं। इस तरह इनके पुस्तक रूप में आने का श्रेय उन्हीं को है। अगर ये आजकल के बालक-बालिकाओं के हृदय में स्वदेश-प्रेम का थोड़ा भी सञ्चार कर सकीं तो मैं समझूँगा कि मैंने ये तुकबन्दियाँ व्यर्थ नहीं जोड़ीं।

प्रयाग
१६-४-४० }

श्रीनाथसिंह

विषय-सूची

किरण का सन्देश

मेरे कमरे सूरज की, एक किरण नित आती है।
जिसको पाती पास उसी पर, अपनी चमक चढ़ाती है।
लड़के होते हैं उदास पर, वह हरदम मुस्काती है।
चुपके से आँखें चमका कर, कानों में कह जाती है।
प्यारे बच्चे ! मुझ-सा ही है, चमकदार तेरा जीवन।
भारत माता सूरज-सी है, तू है उसकी एक किरन ॥

एक तरङ्ग

एक तरङ्ग हृदय में आई, बुद्ध रूप गौतम ने धारा।
एक तरङ्ग हृदय में आई, मीरा ने रनवास बिसारा।
एक तरङ्ग हृदय में आई, जहर पी गई कृष्णकुमारी।
एक तरङ्ग हृदय में आई, कष्ट सहे गान्धी ने भारी।
करते ऐसे काम वीर जन, दुनिया रह जाती है दङ्ग।
पर सोचो तो वह है केवल, एक हृदय की एक तरङ्ग ॥

चिनगारी

घास फूस का ढेर पड़ा था, उस पर गिरी एक चिनगारी।
धुआँ हुआ फिर हुआ उजाला, चमक उठीं फिर गलियाँ सारी।
आग लगी है, आग लगी है, शोर किया लड़कों ने भारी।
मेला सा लग गया वहाँ पर, जमा हुए इतने नर-नारी।

हँस कर बोली वह चिनगारी, ओहो ! मैं हूँ कितनी न्यारी ।
पहले कौन समझ सकता था, मुझमें है यह ताकत भारी ।

× × ×

घास-फूस-सी है यह दुनिया, नर की इच्छा है चिनगारी ।
चाहे तो चमका सकता है, उसके बल से बसुधा सारी ।।

आँधी

छप्पर उड़ कर गिरा भूमि पर, धूल गगन-तल पर जा छाई ।
चौखट से लड़ गये किवाड़े, हर-हर करके आँधी आई ।।
गोफन से बन बाग उठे हिल, छूटे चमगादड़ ज्यों ढेला ।
पट-पट आम गिरे गोली-से, हुआ हवा का बेहद रेला ।।
कंघी करने लगीं झाड़ियाँ, निकले उनसे खरहे तीतर ।
नदियों ने उड़ने की ठानी, नावें उलटीं उनके भीतर ।।
टूटे पेड़ रुकीं सब राहें, और कुओं का छलका पानी ।
आँख बन्द की सूरज ने भी, हार हवा से सब ने मानी ।।
छाई छटा अजीब धरा पर, घिरी घटा फिर काली-काली ।
वर्षा ने धो दिया जगत को, हुई नई उसकी हरियाली ।।
आँधी से भी ज्यादा ताकत, बसती है मनुष्य के मन में ।
वह चाहे तो कर सकता है, कुछ का कुछ दुनियाँ को छन में ।

फूल

धूल उड़े या आँधी आवे । जल बरसे या भय सतावे ।

या डाली से तोड़ा जाऊँ । मसला और मरोड़ा जाऊँ ।।
कभी न भय खाऊँगा मन में । मैल न लाऊँगा जीवन में ।
मरते दम तक मुस्काऊँगा । महक मनोहर फैलाऊँगा ।।

फूल तुम्हारा मुस्काना

मुझे बहुत अच्छा लगता है, फूल तुम्हारा मुस्काना ।
मुझे बहुत अच्छा लगता है, फूल तुम्हारा गुण गाना ।।
कड़ी धूप में देखा मैंने, फूल तुम्हारा कुम्हलाना ।
ओस पड़ी तब समझा यह है, आँखों में आँसू लाना ।।
पर यह छिन भर को होता है, दिन भर रहता मुस्काना ।
कट जाने पर लुट जाने पर, भी हँसते हो मनमाना ।।
अच्छे कामों की सुगन्धि से, मुझको जग है महकाना ।
मदद मिलेगी अगर सीख लूँ, फूल तुम्हारा मुस्काना ।।

यही सोचते

कहीं भी न होऊँ प्रभो मैं अकेला । जहाँ मैं रहूँ हो वहीं एक मेला ।
न दे भेद छोटे-बड़े का दिखाई । पुकारें सभी को सभी टेर भाई ।
सभों के बहे बीच में प्रेम-धारा । मिले एक को दूसरे से सहारा ।
दुखों में, सुखों में सभी साथ होवें । यही सोचते हम जगें और सोवें ।

साहसी बालक

मुझे बहुत अच्छा लगता है अनजाने प्रदेश में जाना ।

मुझे बहुत अच्छा लगता है कठिन काम में हाथ लगाना।
मैं हर एक किताब पढ़ूँगा कुछ हो अपनी अक्ल लड़ा कर।
मैं हर एक परीक्षा दूँगा कुछ हो अपना हृदय कड़ा कर।
बोलो है क्या काम सामने भय मत लाओ दिल में ?
जीने में क्या मजा रहा नर पड़ा न जो मुश्किल में।

मैं कौन हूं ?

शक्ति राम की है मुझमें भी, घूमे जो निर्जन बन में।
भक्ति श्याम की है मुझमें भी, सदा हँसे जो जीवन में।
जिसकी प्रेम दया की शिक्षा, से जागी वसुधा सारी।
गौतम के उस उच्च हृदय का, मैं हूँ पूरा अधिकारी।
पर्वत बन बिजली बादल नद, सूरज चाँद और तारे।
बचपन से ही देखा मैंने, हैं मेरे साथी सारे।
जहाँ कहो मैं वहाँ चलूँगा, जग नहीं डर सकता हूँ।
इच्छा करने की देरी है, मैं सब कुछ कर सकता हूँ।

सन्देश

अच्छे कपड़े काम न देंगे अच्छे जो न विचार हुए।
कलई चढ़ जाने से सोना कब ताँबे के तार हुए ?
लहरों को लख भगने वाले कब सागर से पार हुए ?
अगर हुए तो साहस श्रम से जग के सब व्यापार हुए।

हँस दे

छोड़ रूठना मेरे साथी, हँस दे, हँस दे, हँस दे।
मुख पर दुख का बाँध न हाथी, हँस दे, हँस दे, हँस दे।
माँ को तेरे काम बहुत हैं, पिता नहीं है घर में।
अपने को तू आप मना ले, हँस दे, हँस दे, हँस दे।
फूल बिछे हों या काँटे हों, अपनी राह चला चल।
औरों को दिल सौंप न अपना, हँस दे, हँस दे, हँस दे।

वीर-प्रतिज्ञा

चाह कुछ सुख की नहीं दुख की नहीं परवाह है।
प्रिय देश के कल्याण की हमने गही अब राह है।
हों क्यों न अङ्गारे बिछे मुँह जरा मोड़ेंगे नहीं।
मिट जायँगे पर देश का अभिमान छोड़ेंगे नहीं।
खाली भले ही पेट हो नङ्गी भले ही देह हो।
सौ आफतें हों सामने उजड़ा भले ही गेह हो।
हो देश की जय भय नहीं हमको जरा है क्लेश का।
बाजी लगा कर प्राण की हम साथ देंगे देश का।

बढ़े चलो

तन को बली बना लो ऐसा सह ले सरदी वर्षा घाम।
मन को बली बना लो ऐसा टेक न छोड़े आठों याम।

कर्मक्षेत्र है यह पृथ्वी-तल व्यर्थ यहाँ आलस आराम।
निर्भय आगे बढ़े चलो नित किये चलो बस अपना काम।
तभी तुम्हारी हो सकती है पूरी अभिलाषा मन की।
तभी मजे में कर सकते हो सेवा तुम स्वदेश जन की।

बना दो

गङ्गा-सा निर्मल जीवन हो अटल हिमालय-सा हो ध्यान।
काम सदा तन आये सब के मन में हो स्वदेश का मान।
सुख में दुख में एक सरीखी होठों पर हो मृदु-मुस्कान।
हे भगवान बना दो हमको ऐसा कोई मनुज महान।

माता का लाल

दीन दुखी जन की पुकार पर जो नित कदम बढ़ाता है।
भूखा देख साथियों को निज जो भूखा रह जाता है।
अन्धों को मौका पड़ने पर जो उँगली पकड़ाता है।
रोती आँखें देख आँख में जिसकी जल भर आता है।
जो न कभी भी भय खाता है क्यों न खड़ा हो सन्मुख काल।
वही वीर है वही व्रती है और वही माता का लाल।

एक गुरु के शिष्य

शिष्य एक गुरु के हैं हम सब एक पाठ पढ़ने वाले।
एक फौज के बीर सिपाही एक साथ बढ़ने वाले।
धनी निर्धनी ऊँच नीच का हममें कोई भेद नहीं।

एक साथ हम सदा रहे तो हो सकता कुछ खेद नहीं।
हर सहपाठी के दुःख को हम अपना ही दुःख जानेंगे।
हर सहपाठी को अपने से सदा अधिक प्रिय मानेंगे।
अगर एक पर पड़ी मुसीबत दे देंगे सब मिल कर जान।
सदा एक स्वर से सब भाई गायेंगे स्वदेश का गान।

चाँद अकेला

घोड़ा मुझको लेकर भागा देख रहा था चाँद अकेला।
मैं उस रात, रातभर जागा देख रहा था चाँद अकेला।
कितने जङ्गल देखे-भाले पार किये कितने नद-नाले।
इसको वही बता सकता है देख रहा था चाँद अकेला।
मुझको अब भी याद बनी है जब बचपन में मेरी माता।
कहती-बेटा सो जा सो जा चन्दा अपने घर को जाता।
पर मैं तब भी रहता जगता आँख बन्द कर माँ को ठगता।
कारण वही बता सकता है देख रहा था चाँद अकेला।
लेकिन जो न चाँद दिखलाता तो मैं दिन में ही सो जाता।
नहीं जगाये फिर जगता था हिला-हिला थक जाती माता।
तरह-तरह के सपने लखता क्या होती वह सुन्दर बेला।
चन्दा बन कर माँ आ जाती लग जाता तारों का मेला।
मगर अमावस सदा न रहती फिर छोटा-सा चांद दिखाता।
उसको उँगली दिखला कर आ-आ करके पास बुलाता।
इस प्रकार मां की गोदी में मैं कितना करता था खेला।

इसको वही बता सकता है देख रहा था चाँद अकेला।
लगा निकलने जब मैं घर से बड़ा हुआ औ, गया मदरसे।
पढ़ा किताबों में कि किस तरह पकड़ा चाँद राम ने कर से।
लूँगा! लूँगा! चन्दा लूँगा कह कर वे रोये चिल्लाये।
समझा कर कौशल्या हारीं घबड़ाये से दशरथ आये।
तब उनको दर्पण पकड़ा कर उसमें चन्दा गया बुलाया।
कैसा था वह पाठ मनोहर अब तक मैंने नहीं भुलाया।
मुन्ना चुन्नी मोहन चम्पा भोला औ, मैं बैठे खाने।
याद बनी है उस दिन की भी चाँद लगा खिड़की से आने।
पर न किसी ने उसको देखा वह भी थी क्या अद्भुत बेला।
खोज लिये हम सबने साथी सिर्फ रह गया चाँद अकेला।

बीती बातें

कैसा था वह समय मनोहर जब अर्जुन जैसे बलधारी।
पढ़ने जाते थे जङ्गल में निज गुरु से विद्याएँ सारी।
प्रश्न किया गुरु ने शिष्यों से तुम्हें मारना है वह तोता।
लेकिन पहले यह बतला दो क्या-क्या तुम्हें दृगोचर होता।
तना किसी ने डाल किसी ने देखा वृक्ष किसी ने सारा।
तोता छोड़ और सब भूले ध्यान जभी अर्जुन ने धारा।
कहा गुरु ने लग सकता है सिर्फ उसी का ठीक निशाना।
जिसने सीखा है अर्जुन-सा सिर्फ लक्ष्य पर ध्यान जमाना।
सूरज ने वे दिन देखे हैं तारों ने देखीं वे रातें।

जिनकी मैं लिखने बैठा हूं आज यहाँ कुछ भूली बातें।
शक्ति पण्डितों में थी ऐसी मुर्दों को जिन्दा कर देते।
मानो या मत मानो लेकिन एक मिसाल यहाँ हम देते।
एक शेर की देख हड्डियाँ बोला एक गुरु का चेला।
मैं इसको जिन्दा कर दूँगा ज्ञात मुझे वह मंत्र नवेला।
लगा शेर को जीवित करने बस वह वहीं बैठ कर भू पर।
भागे उसके सारे साथी झपटा शेर उसी के ऊपर।
अजी आदमी क्या उस युग में तोते भी थे पण्डित होते।
ऐसी बात ज्ञान की कहते बड़े-बड़े खा जाते गोते।
जातक कथा पढ़ी है जिसने वह मानेगा बात हमारी।
स्वयं बुद्ध ने तोता बन कर तर्क किया पंडित से भारी।
वे दिन थे सुख के जादू के सब की इच्छा पूरी होती।
घासों पर बिखरे मिलते थे तब समुद्र के सच्चे मोती।
जङ्गल में पेड़ों के नीचे गड़वा देता बाप खजाना।
लड़के की जब इच्छा होती खुदवा लाता था मनमाना।
ये हैं बड़ी पुरानी बातें रहीं समय तक पृथ्वीराज के।
हो सकता है इन्हें न मानें पढ़े-लिखे विद्वान् आज के।
फिर भी है यह मेरा दावा निकल बनों को जो जायेगा।
पेड़ों की पत्ती-पत्ती को गीत यही गाता पायेगा।

जङ्गल में क्या होता है?

कोई मुझसे बतलाओ रे जंगल में क्या होता है।

कब उठता सो कर वनमानुष और हाथ-मुँह धोता है ?
मनमाने सब काम वहां हैं जब जी में आये जागो।
अगर सामने दुश्मन आये मार भगाओ या भागो।
हरियाली देती है भोजन ताल पिलाते हैं पानी।
जी चाहे तो कर सकते हो वहां रात दिन शैतानी।
चूहे सदा चुरा कर खाते पाप न चोरी को कहते।
नहीं अदालत नहीं सिपाही और नहीं राजा रहते।
घने बनों में ताल किनारे बारहसिंघा क्या करता ?
निर्जनता में नहीं जरा क्यों भूत-प्रेत से वह डरता।
कारण वही बता सकता है जिसने देखा हो जंगल।
मैं तो लिखता हूँ यह कविता दिल बहलाने को केवल।
शेर बली है बेशक सब से मार मृगों को खाता है।
सुन कर उसकी विकट गर्जना सब जंगल थर्राता है।
पर वह रहता सदा अकेला मेला नहीं लगाता है।
सेना नहीं खड़ी करता है महल नहीं उठवाता है।
बस्ती में जो बकरी रहती वह सदैव काटी जाती।
पर जंगल की बकरी पर इस तरह नहीं आफत आती।
अगर भेड़िए पीछा करते टीले पर चढ़ जाती वह।
बस्ती से ज्यादा जंगल में अपनी जान बचाती वह।
राजपाट या सड़क नहीं है तोप नहीं तलवार नहीं।
धर्म नहीं कानून नहीं है शहर नहीं व्यापार नहीं।
फिर जंगल में क्या होता है अजी सदा रहती हलचल।

स्काउट बन पहुंचो बन में देखो जंगल का मंगल।

भारतवर्ष

प्यारा भारतवर्ष हमारा देश बड़ा ही नामी है।
तीन लोक से न्यारा है यह सब देशों का स्वामी है।
ऋषियों की यह तपोभूमि है बीरों की यह धरती है।
स्वर्गभूमि भी इसकी समता करने से नित डरती है।
बादल से भी ऊँचा उठता मुकुट हिमालय है इसका।
सूरज की किरणें सोने से मढ़ देती हैं तन जिसका।
बहती है गंगा की धारा अमृत-सा जिसका जल है।
चूम रहा है चरण समुन्दर जिसमें अति अपार बल है।
पहले पहल यहीं ऋषियों ने मंत्र वेद का गाया था।
ज्ञान यहीं से अपना सारा इस दुनियाँ ने पाया था।
बड़े भाग्य से दिया यहीं हमको भी जन्म विधाता ने।
पहले पहल इसी पृथ्वी पर खड़ा किया है माता ने।
इसके ही जलवायु आदि से बना हमारा यह तन है।
इसके रंग विरंगे फूलों को लख फूल रहा मन है।
इसीलिये हम कहते हैं यह भारतवर्ष हमारा है।
माता की गोदी-सा हमको जो सदैव ही प्यारा है।
हरे-भरे खेतों में इसके भरा हमारा है जीवन।
क्यों न निछावर कर दें इस पर भी अपना तन मन धन।

फूलों का गीत

फूल जगत के हैं हम प्यारे। रूप रंग में न्यारे न्यारे ॥
काम हमारा है मुस्काना। सुन्दर पास-पड़ोस बनाना ॥
ओस सुबह की नहला देती। तितली आन बलैया लेती ॥
भौंरे गान सुना जाते हैं। जहाँ हमें फूला पाते हैं ॥
पाठ प्रेम का पढ़ते आला। एक बनाते हम मिल माला ॥
सदा मेल से शोभा पाते। भेद भाव हम दूर भगाते ॥
चढ़े सिरों पर आदर पावें। या सड़कों पर कुचले जावें ॥
कभी न मुख पर दुख लावेंगे। हर हालत में मुस्कावेंगे ॥
खिलें बाग में या घूरे पर। हम लेते हैं प्रण पूरे कर ॥
यानी हँसते औ' मुस्काते। सुन्दर पास पड़ोस बनाते ॥

बढ़े चलो

फूल बिछे हों या काँटे हों राह न अपनी छोड़ो तुम।
चाहे जो विपदाएँ आयें मुख को जरा न मोड़ो तुम ॥
साथ रहें या रहें न साथी हिम्मत मगर न छोड़ो तुम।
नहीं कृपा की भिक्षा माँगो कर न दीन बन जोड़ो तुम ॥
बस ईश्वर पर रखो भरोसा पाठ प्रेम का पढ़े चलो।
जब तक जान बनी हों तन में तब तक आगे बढ़े चलो ॥

संसार किसका है ?

जिसने बात न की तारों से जब रहती है दुनियाँ सोती।

जिसने प्रातःकाल न देखा हरी घास पर बिखरे मोती ॥
घटा घनों की छटा बनों की जिसने चित से दिया उतार।
उसके लिये अँधेरा जग है उसकी आँखें हैं बेकार ॥
छोटे से छोटे प्राणी का घर जिसने देखा भाला।
भेद-भाव से भरा नहीं जो प्रिय न जिसे कुंजी ताला ॥
फूलों-सा जो हँसता हरदम क्यों न आ पड़े विपत हजार।
वह इस दुनियाँ का राजा है उसका ही है यह संसार ॥

चमेली

धूल उड़ी या बरसा पानी। मूर्ख बढ़े या उपजे ज्ञानी।
सबको हँसती मिली चमेली। फिर उजड़ी फिर खिली चमेली ॥
राजाओं में ठनी लड़ाई। जीत हुई या आफत आई।
महल ढहे वा उठी हवेली। फिर उजड़ी फिर खिली चमेली ॥
भय चिन्ता को पास न लाओ। आगे बढ़े बराबर जाओ।
भूलो मत यह सखा-सहेली। फिर उजड़ी फिर खिली चमेली ॥

क्या ?

कड़ी धूप में निकले हैं तब भूपल से घबराना क्या ?
सागर में जब कूदे तब डूबे-डूबे चिल्लाना क्या ?
दुनियाँ में जब आये हैं तब दुख से पिंड छुड़ाना क्या ?
आफत, चिन्ता, मौत, निराशा से भगना भय खाया क्या ?
सफलता या असफलता इस में मन उलझाना क्या ?

आगे कदम बढ़ा देने पर पीछे उसे हटाना क्या ?

कहो मत, करो

सूरज कहता नहीं किसी से, मैं प्रकाश फैलाता हूँ।
बादल कहता नहीं किसी से, मैं पानी बरसाता हूँ॥
आँधी कहती नहीं किसी से, मैं आकर ढा देती हूँ।
कोयल कहती नहीं किसी से, मैं अच्छा गा लेती हूँ॥
बातों से न, किन्तु कामों से, होती है सब की पहचान।
घूरे पर भी नाच दिखा कर मोर झटक लेता है मान॥

बाल–विनय

विनय यही है हे परमेश्वर! गीत तुम्हारे गाऊँ मैं।
बैठा अपने दिल में स्वामी हरदम तुमको पाऊँ मैं॥
पुत्र तुम्हारा कहलाऊँ मैं काम तुम्हारे आऊँ मैं।
जितने जीव रचे हैं तुमने सबको सुख पहुंचाऊँ मैं॥
मस्तक मेरा तुम्हें झुका हो उस पर हो सेवा का भार।
कैसा ही दुख का सागर हो उसे करूँ मैं छिन में पार॥
एक फूल-सा हो यह जीवन लाल लाल हो जिसमें प्यार।
अच्छे कामों की सुगन्ध से भर दूँ मैं सारा संसार॥
किसी वेश में आओ स्वामी तुम्हें सदा मैं लूँ पहिचान।
अंधे की लकड़ी बन जाऊँ सूरज का बन जाऊँ ज्ञान॥
ऐसा बल दो रोते के मुख में भर दूँ मीठी मुस्कान।

कभी नहीं उनसे मुख मोड़ूँ जो करने की लूँ मैं ठान॥
है यह भारत देश हमारा इसको भूल न जाऊँ मैं।
इसके नदी पहाड़ वनों पर पक्षी-सा मँडराऊँ मैं॥
इसका नाम न जाये चाहे अपना शीश कटाऊँ मैं।
भूल तुम्हें भी हे परमेश्वर! इसका ही कहलाऊँ मैं॥

हम

फूल बिछे हों या काँटे हों, राह नहीं हम अपनी छोड़ें।
बहा प्रेम की गंगा दें हम, बैर-फूट का पत्थर फोड़ें॥
दुनियाँ में जितने अवगुण हैं, सबसे अपना नाता तोड़ें।
सुख में या दुख में बीतें दिन, प्रेम-सहित प्रभु को कर जोड़ें॥

वीर न अपनी बान छोड़ते

सूरज अपनी चमक छोड़ दे तो कैसे हो दूर अँधेरा ?
धरती पर सब पेड़ पड़ रहें तो चिड़ियाँ लें कहाँ बसेरा ?
दूध लगे यदि खारा होने तो कैसे माँ प्यार दिखावे ?
आग अगर तज दे गरमाहट रोटी कैसे कौन पकावे ?
तजते नहीं स्वभाव उच्च जन, पर-सेवा से मुँह न मोड़ते।
लाख मुसीबत मिले मार्ग में वीर न अपनी बान छोड़ते॥

बड़ा होने पर

मुन्नी बढ़ कर रानी होगी मुन्नू होवेगा राजा।

बबुआ बेशक ब्याह करेगा औ, बजवावेगा बाजा ॥
सोहन सिर्फ किसान बनेगा धान बाजरा बोवेगा ।
धन्नू बन सचमुच का धोबी सबके कपड़े धोवेगा ॥
मोहन मोटर सीख चलाना दूर देश को जावेगा ।
लल्लू केवल लेक्चर देगा लीडर वह कहलावेगा ॥
शम्भू कहता है—शिक्षक बन मैं लड़कों को डाटूँगा ।
मगर हुआ मैं कभी बड़ा तो कान गुरु के काटूँगा ॥

हवा के झोंकों से

बहो, हवा के झोंको आओ ।
झर-झर कर पत्तों पर गाओ ।
पूर्व दिशा में जब हो लाली । जागे जंगल की हरियाली ।
तब तुम मेरे ताजे मन में । भर दो फूलों की खुशहाली ।
साधु जनों के बचन अनूठे । मेरे कानों में कह जाओ ।
बहो, हवा के झोंको आओ ॥

वह मुख

जब मैंने वह मुखड़ा देखा । दूर भगा सब दुखड़ा देखा ॥
उस मुख की शोभा है न्यारी । उसकी छवि है मुझको प्यारी ॥
दुख में वह धीरज देता है । मन की पीड़ा हर लेता है ॥
सुन्दर और सुहाना । किसका मुख है ? मुझे बताना ॥
उसके बिना व्यर्थ सब सुख है । वह मेरी माता का मुख है ॥

घाम !

जा मेरे आँगन से घाम । गरमी में क्या तेरा काम ?
नहीं हटेगा तो झाड़ू ला तुझे बटोरूँगा मैं घाम ।
नहीं हटेगा तो पानी ला तुझको बोरूँगा मैं घाम ।
कमरे में मैं बन्द न हूँगा मुझे न करना है आराम,
जा मेरे आँगन से घाम !

वसन्त का आगमन

वसन्त का आगमन हुआ फिर । पूर्ण गन्ध से पवन हुआ फिर ॥
चहकी कोयल महकी झाड़ी । पहनी नई प्रकृति ने साड़ी ॥
चेत-चेत तू भी मेरे मन । चहक महक मय नव-वसन्त बन ॥
नई उमङ्गों की बरसा कर । सरसा दे जन-जन का जीवन ॥

शरद पूर्णिमा

शरद की अन्तिम निशा है चन्द्रमा मुस्का रहा है ।
गगन पर्वत पेड़ भू तक चाँदनी छिटका रहा है ॥
हे तपस्वी ताड़ना अब सह रहे हो किसलिये तुम ।
आज यह जग स्वर्ग के अति पास-सा दिखला रहा है ॥
अब नहीं है वह अँधेरा वह न बसुधा पर उदासी ।
और चेतन हो उठी है अमृत पीकर प्रकृति प्यासी ॥
व्यर्थ तुम गिरि की गुफा में हो छिपे कर बंद आँखें ।
आज सागर सुप्त निज तट को जगाने आ रहा है ॥

बड़ा होने पर

होऊँगा जब जरा बड़ा मैं। यों न रहूँगा कहीं खड़ा मैं॥
खोलूँगा मैं एक दुकान। उसमें होगा सब सामान॥
गेंदे गुड़ियाँ तीर तिपाई। मीठे मेवे और मिठाई॥
खेलूँगा औ, खाऊँगा मैं। हरगिज नहीं अघाऊँगा मैं॥
या होऊँगा सिर्फ हँसोड़। सारे कामों से मुँह मोड़॥
मुँह में मलकर काजल काला। पहन घास-पत्तों की माला॥
रास्ते में गिर जाऊँगा मैं। सब को खूब हँसाऊँगा मैं॥
या होऊँगा ठेकेदार। नये-नये बनवा घर-द्वार॥
उनमें पलँग बिछाऊँगा मैं। सोऊँगा सुख पाऊँगा मैं॥
या होऊँगा मैं सरदार। लेकर तुपक ढाल तलवार॥
निकलूँगा घोड़े पर चढ़ कर। किसी फौज के आगे बढ़कर॥
सन्मुख जिसको पाऊँगा मैं। उस पर तुपक चलाऊँगा मैं॥
पर जब थक जाऊँगा खूब। अथवा बड़ी लगेगी ऊब॥
तब कैसे मन बहलाऊँगा? माँ की गोद कहाँ पाऊँगा?

एक मित्र

दादा ने है बन्दर पाला। है वह बन्दर बड़ा निराला॥
दरवाजे पर बैठा रहता। कुछ भी नहीं किसी से कहता॥
शायद सोचा करता मन में—पड़ा हुआ हूँ मैं बंधन में॥
इससे भूल गया सब छल-बल। खा लेता जीने को केवल॥
मैं उस राह सदा जाता हूँ। नित चुमकार उसे आता हूँ॥

जिससे वह खुश हो सोचे रे। अब भी एक मित्र है मेरे॥

नालन्दा विश्वविद्यालय और द्वारपाल

नालन्दा में किसी समय में एक बड़ा था विद्यालय।
पंडित एक द्वार पर उसके बैठा करता था निर्भय॥
उस विद्यालय में जो पढ़ने आते उनसे वह पंडित।
प्रथम दिवस कुछ प्रश्न पूछता और मेटता निज संशय॥
इस प्रकार वह वीर व्रती चतुरों की चारु परीक्षा कर।
जाने की अनुमति देता था उनको फाटक के भीतर॥
आज नहीं वह द्वारपाल है और नहीं वह विद्यालय।
पर इतिहास-पृष्ठ पर रक्षित है उनकी यह कथा अमर॥

राम

हम लाड़ले हैं राम के हम राम की सन्तान हैं।
अब भी हमारी जीभ पर श्रीराम के गुणगान हैं।
जब राम थे निर्दोष हम दोषी कहा सकते नहीं।
श्रीराम के शुभ नाम पर कालिख लगा सकते नहीं।
माता पिता का मान करना राम ही थे जानते।
निज भाइयों को प्यार करना राम ही थे जानते।
हम भी घरों में प्रेम की गंगा बहावेंगे सदा।
झगड़े न आपस के हमें आकर सतावेंगे कदा।
तज राज-धन, वन-वन विचरना राम ही का काम था।

निज देश का सब दुःख हरना राम ही का काम था।
हम भी दुखी लख देश को सुख नींद सोवेंगे नहीं।
श्रीराम के शुभ नाम का अभिमान खोवेंगे नहीं।
रावण सरीखे शत्रु से थे राम भय खाते नहीं।
यह बात होती तो उसे जल्दी हरा पाते नहीं।
हम भी खलों के सामने निज सिर झुका सकते नहीं।
जब शत्रु होगा सामने तब हम लुका सकते नहीं।
अब भी बनी है राम की हममें बड़ी वह वीरता।
अब भी बनी है राम की हममें बड़ी वह धीरता।
तब क्यों न लेकर राम का हम नाम फिर जय बोल दें।
इस देश की स्वाधीनता के बन्धनों को खोल दें।

कृष्ण कन्हैया

कृष्ण कन्हैया ! कृष्ण कन्हैया !! कहाँ गईं सब तेरी गैया ॥
हम बालक हैं भूखे प्यासे, और दुखी है भारत मैया ॥
कानों में कुंडल हैं तेरे, सिर पर मोर पंख बहुतेरे।
अरुण अधर हैं नेत्र निराले, केश बड़े ही कोमल काले ॥
चौड़ी छाती सबल भुजाएँ, कमल करतलों पर बलि जाएँ।
पीताम्बर से शोभित है तन, वनफूलों से विकसित है मन ॥
हम भी तुझ से बनें मुरारी, हम भी सुख से सनें मुरारी।
मुसीबतों के भारी गिरि को, हम भी उठा बनें गिरिधारी ॥
दे हमको वरदान कन्हैया, बहुत दुखी है भारत मैया।

वंशीवाला नँदलाला

घर-घर माखन खाने वाला। वन-वन गाय चराने वाला।
पहने वनफूलों की माला। प्रिय वंशीवाला नँदलाला।
आज बसा है मेरे मन में।
मुन्नी तू मत खेल अकेली। आ बन मेरी सुघड़ सहेली।
मोरपंख मैं सिर पर पहनूँ। तू बालों में गूँथ चमेली।
मिल दोनों नाचें आँगन में।
मेरे आयें सारे संगी। तेरी आयें सखियाँ सारी।
हम अहीर के वीर वेश धर। एक बसायें मथुरा न्यारी।
हो स्वच्छन्द फिरें घर-वन में।
दुख की चाहे उठें घटायें। चाहे सुख के बादल छायें।
एक समान रहें हम हँसते। प्रिय स्वदेश पर बलि-बलि जायें।
कुछ कर दिखलायें जीवन में।

ध्रुव की प्रतिज्ञा

नहीं चाहता है जो मुझको उसके पास न जाऊँगा।
धन-दौलत की चाह नहीं मां मैं वन में सुख पाऊँगा।
जहां न कोई देखे मुझको जाऊँगा उस निर्जन में।
मां तेरा उपदेश सखा बन बैठा है मेरे मन में।
पाने में वह बात नहीं है जो है बात गँवाने में।
पुत्र वही जो मिट जाता है अपनी टेक निभाने में।

महात्मा गान्धी

राह बड़ी हो धूप बड़ी हो। आंधी हो या लगी झड़ी हो।
चाहे जैसी बिकट घड़ी हो। क्यों न सामने मौत खड़ी हो।
तुम आगे बढ़ते जाओगे। प्रेम-पाठ पढ़ते जाओगे।
हृदय तुम्हारा अति कोमल है। आंखों में करुणा का जल है।
किन्तु साथ ही टेक अटल है। और एक ईश्वर का बल है।
धन्य देश के सेवक सच्चे। बनें तुम्हीं से हम सब बच्चे।

टंडन जी के प्रति*

भय चिन्ता से दूर बसे बन्दीगृह से आने वाले।
हृदयों में फिर से उमङ्ग की नई लहर लाने वाले।
टंडन जी का दर्शन करके आज हुए हम सुख शाली।
पर कितने दिन रह सकती है हृदयों की यह हरियाली॥१॥
जारी है प्रियजन का जेलों में ऐसा आना-जाना।
नहीं जानते यह स्वागत का या कि बिदा का है गाना।
इससे दुख-सुख के झगड़े से आज निकल करके बाहर।
त्याग-मूर्ति टंडन जी का हम स्वागत करते हैं सादर॥२॥
जिसके प्रियजन जेलों में थे जिसके मुँह पर ताले थे।
निर्धनता अपमान गुलामी जिस पर डेरा डाले थे।
उस जनता को जगा दिया था तुमने बन्दीगृह जाकर।
अति कृतज्ञ हो इसीलिए वह स्वागत करती है सादर॥३॥

* तारीख १३-१० २६ को उनके जेल से छूट कर आने पर।—लेखक

बड़े समय में आप हमारे बीच यहाँ पर आये हैं।
जब कि जुल्म के काले बादल दशों दिशा में छाये हैं।
अंगारों की वर्षा होगी हमें न घबड़ाना होगा।
जिधर कहेंगे आप उधर ही बस बढ़ते जाना होगा॥४॥

बानर सेना का गीत*

बानर सेना निकल पड़ी है घूमेगी भारत भर में।
भारत माँ के प्यारे-प्यारे बच्चे हैं इस लश्कर में।
चर्खे खूब चलायेंगे हम खद्दर को अपनायेंगे हम।
करके जमा विदेशी कपड़े उनको जल्द जलाएँगे हम।
गाँधी का यह हुक्म बजाने जायेंगे हम घर-घर में।
बानर सेना निकल पड़ी है घूमेगी भारत भर में॥
माँग-माँग कर दाना-दाना जमा करेंगे खूब खजाना।
आटा, चावल, चन्दा, लकड़ी होगा सब कुछ हमें जुटाना।
छिड़ा जंग है रसद इकट्ठी करलेंगे हम दमभर में।
बानर सेना निकल पड़ी है घूमेगी भारत भर में॥
आगे बढ़ते जायेंगे हम पीछे पग न हटायेंगे हम।
लाख आफतें क्यों न खड़ी हों जरा नहीं घबरायेंगे हम।
तोप चले या गोली बरसे या लाठियाँ लगें सर में।
बानर सेना निकल पड़ी है घूमेगी भारत भर में॥

*सन् १९२९-३० के सत्याग्रह-संग्राम के दिनों में लिखित।—लेखक

क्या बैठे हो ?

तेज हवा के झोकों पर चढ़ आ पहुंचे हैं बादल के दल।
पंख खोल उड़ती हैं बूँदें मची हुई है बन में हलचल ॥
सुख से पेड़-पहाड़ नहाते मोर नाचते मेंढक गाते।
भूल दुखों को, आशा से भर खेत किसान जोतने जाते ॥
अन्धकार से कहता जुगुनू राह नहीं हूँ मैं निज भूला।
जर्रे जर्रे में जीवन है कलियों ने है डाला झूला।
क्या बैठे हो घर में भाई चलो प्रकृति की छटा निहारें।
उगते खेत, उमड़ती नदियाँ, घिरती घन की घटा निहारें ॥

सहपाठा

एक देश में जन्मे हैं सब एक लहू है सब तन में।
एक तरह से हँसते हैं सब मुख तो देखो दर्पन में ॥
एक चाँद मामा है सबका एक तरह का माँ का प्यार।
आँसू एक निकलता सबके जब देता है कोई मार ॥
कहलाते हैं हम सब बच्चे चितवन सबकी एक समान।
एक मदरसे में पढ़ते हैं एक गुरु से एक जबान ॥
धनी-निर्धनी ऊँच-नीच का भेद-भाव तब क्यों मानें ?
अपने साथी को अपने से घटकर क्यों मन में जानें ?
अपना और पराया कैसा ? यहाँ सभी हैं अपने लोग।
भेद-भाव से भागो भाई समझो इसको भारी रोग।
जो सुख हमको मिला हुआ है वह सबको पहुँचाएँगे।

अगर नहीं तो सब के दुख में शामिल हो सुख पाएँगे ॥

कबूतर

जरा बता दे मुझे कबूतर। क्या है इस चिट्ठी के भीतर।
इसे कहाँ पहुंचायेगा तू। और कहां सुस्तावेगा तू।
राजाओं में ठनी लड़ाई। याकि किसी पर आफत आई।
पड़ा दूत जो बनना तुझको। यों ही काम बता कुछ मुझको।
कितने देश लखे हैं तूने। कितने स्वाद चखे हैं तूने।
पार किये कितने नद-नाले। कितने बन में डेरे डाले।
कैसे कहाँ बसे नर नारी। लगी कहाँ कैसी फुलवारी।
गया कहां तक है यह जंगल। कहां-कहां हैं ऊसर दलदल।
जो लौटे तू मेरे घर में। चल दूँ तेरे साथ सफर में।
मुझको स्काउट बनना है। जंगल में तम्बू तनना है।

चल बे घोड़े

चल बे घोड़े सरपट चाल। दो दिन में पहुंचे बंगाल।
कलकत्ते की काली देखें। हुगली नदी निराली देखें।
चलें वहाँ से फिर आसाम। करें पहाड़ों पर आराम।
ऐंड़ लगावें पहुंचे दिल्ली। गड़ी जहाँ लोहे की किल्ली।
चलें वहाँ से फिर पंजाब। लाँघें झेलम और चनाब।
ऐड़ लगावें मथुरा आवें। हरद्वार काशी को जावें।
चल बे घोड़े सरपट चाल। दो दिन में पहुंचे बंगाल।

जान चाइना मैन

सिर पर नकली बाल बढ़ाए। पैरों में पौला अटकाए।
लम्बी मूँछें कुरता ढीला। 'जान चाइना मैन' रसीला।
चला देखने हिन्दुस्तान। जन्मे जहाँ बुद्ध भगवान।
पहने लहँगों का पैजामा। हो मानो तिब्बत का लामा।
चिपटी नाक बदन सब पीला। जान चाइना मैन रसीला।
चला देखने हिन्दुस्तान। जन्मे जहाँ कृष्ण भगवान।
उमड़ीं नदियाँ गरजे बादल। आंधी आई कांपे जङ्गल।
पर बढ़ता ही रहा हठीला। जान चाइना मैन रसीला।
चला देखने हिन्दुस्तान। जन्मे जहां राम भगवान।
जैसे मधु-मक्खी का छत्ता। वैसे बसा शहर कलकत्ता।
हुआ उसे लन्दन का धोखा। जान चाइना मैन अनोखा।
लगा सोचने हो हैरान। क्या यह ही है हिन्दुस्तान।
वह प्रभु के दर्शन का प्यासा। लगा भटकने मग भूला-सा।
ठिठक देख जुलाहा चोखा। जान चाइना मैन अनोखा।
लगा सोचने हो हैरान। क्या हैं यही बुद्ध भगवान।
आगे बढ़ा नजर दौड़ाई। चलता चाक पड़ा दिखलाई।
चक्र सुदर्शन का खा धोखा। जान चाइना मैन अनोखा।
लगा सोचने हो हैरान। क्या हैं यही कृष्ण भगवान।
जा पहुँचा वह नदी किनारे। धोबी कपड़े जहां निखारे।
था अति श्रम ने जिसको सोखा। जान चाइना मैन अनोखा।

लगा सोचने हो हैरान। क्या हैं यही राम भगवान।
देख गरीबों के दुबले तन। देख गरीबों के उजले मन।
और हो गया दुख से पीला। जान चाइना मैन रँगीला।
कहा—कहाँ वह हिन्दुस्तान। जहाँ खुशी के हों सामान।
पड़ा उसे तब नाच दिखाई। नाचें भालू, सांप, लुगाई।
कभी न देखी थी यह लीला। जान चाइना मैन रंगीला।
बोला तब वह हे भगवान। खूब बसा है हिन्दुस्तान।
लखा नमाजी लखा पुजारी। देखा सज्जित सैनिक भारी।
कैदी का पिंजड़ा भड़कीला। जान चइना मैन रँगीला।
बोला तब वह हे भगवान। खूब फँसा है हिन्दुस्तान।
इस प्रकार निज दहलाकर मन। इस प्रकार निज बहलाकर मन।
लखता घर, बन, जंगल, झाड़ी। जान चाइना मैन खिलाड़ी।
चला देखने हिन्दुस्तान। जा न कभी था रेगिस्तान।
पर ऊँटों से हुआ यही भ्रम। क्या सचमुच हो नीर गया कम।
तेरी गंगा-जमुनी साड़ी। जान चाइना मैन खिलाड़ी।
पूछे कहां गई रे? बोल। हे भारत की धरती! डोल!!

इस प्रकार देखता हिन्द को नाम राम का लेता।
गली-गली सब गांव-गांव वह गया चीन का नेता।
देखीं नई-नई कुछ चीजें नए-नए नर-नारी।
देखा उसने सब बच्चों को बातें करते प्यारी॥
खेल-कूद में पढ़ने-लिखने में रत हैं जो बच्चे।
वे ही कल अपने स्वदेश के होंगे सेवक सच्चे॥

बिच्छू भी रह रहा शौक से यहाँ किसे क्या डर है।
भले-बुरे सब रहें यहाँ भारत तो सब का घर है।
पर तितली का आदर होता फूल कहाते प्यारे।
बिच्छू जो हैं डंक मारते कहलाते हत्यारे॥
पर सेवा से आदर मिलता पर पीड़ा से निन्दा।
यद्यपि दोनों का स्वदेश है दोनों रहते ज़िन्दा॥
हे शंकर जी भारत में फिर सुख का मौसम आवे।
जान चाइना मैन यही दोनों कर जोड़ मनावे।
रोज सवेरे सब बच्चों को मुर्गा बोल जगावे॥
हरी डाल पर तोता बैठा मीठे पाठ पढ़ावै॥
आसमान में उड़ें कबूतर नव सन्देशे लावें।
तालाबों में बतखें तैरें सुन्दर छटा दिखावें॥
कम न लड़कियां हों लड़कों से खेलें औ' सुख पावें।
दुख दरिद्र को गेंद का तरह ठोकर मार भगावें॥

× × ×

जान चाइना मैन ये शिव को विनय सुनाय।
बुद्ध गया में बस गया कोंपल कुटी चुनाय॥

भारत की बेटी

मैं हूं उस भारत की बेटी जिसमें थी जन्मी सीता।
मैं हूं उस भारत की बेटी जिसमें रची गई गीता।
कथा सुनी है मैंने सुन्दर दमयंती गान्धारी की।

रूला चुकी है व्यथा मुझे भी हरिश्चन्द्र की नारी की।
कहो न मुझसे बैठूँ घर में होगी यह तो नादानी।
क्यों न जान दे दूं स्वदेश हित बनकर झाँसी की रानी।

सहेली

बनी न रह अनजान सहेली। अपने को पहचान सहेली।
गहने धर दे अलमारी में छिदा न नाहक कान सहेली।
तेरी सेवा का भूखा है सारा हिन्दुस्तान सहेली।
उठ-उठ चतुर सुजान सहेली अपने को पहचान सहेली।
पड़ी न रह दिन भर बिस्तर में मूरख बन कर बैठ न घर में।
सुन तो क्या कहता है भैया "चल-चल मेरे साथ समर में।"
रख भैया का मान सहेली। सँभले हिन्दुस्तान सहेली।

बदलो

बदल गया है बहुत जमाना, बदलो अपना साज सहेली।
अब जो बैठोगी पर्दे में, तुम्हें लगेगी लाज सहेली।
भारत की सेवा करना है, माता की पीड़ा हरना है।
तुम्हें देश के हित मरना है, नहीं किसी से कुछ डरना है।
जग में नहीं किसी से कम हो, कर दो साबित आज सहेली।
बदल गया है बहुत जमाना, बदलो अपना साज सहेली॥

चलो मदरसे

चलो सहेली चलो मदरसे, निकलो, निकलो, निकलो घर से।
लिखना सीखो पढ़ना सीखो, गुण के गहने गढ़ना सीखो।

दिन-दिन आगे बढ़ना सीखो ॥
छोड़ो नींद उठो बिस्तर से, चलो सहेली चलो मदरसे ।
हँसना सीखो गाना सीखो, दुःख में भी मुसकाना सीखो ।
सब का चित्त चुराना सीखो ॥
मेल बढ़ाओ दुनिया भर से, चलो सहेली चलो मदरसे ।
डट कर सेवा करना सीखो, कष्ट दुखी का हरना सीखो ।
देश धर्म पर मरना सीखो ॥
फूल तुम्हारे ऊपर बरसे, चलो सहेली, चलो मदरसे !!

चार कुली

बच्चो हैं बम्बई शहर में, लाखों रहते कुली कबारी ।
कुछ सड़कों पर सोया करते, कुछ को मिली कोठरी काली ॥
इन लाखों में आओ तुमको, आज चार की कथा सुनाएँ ।
एक कोठरी में रहते वे, एक द्वार से आएँ-जाएँ ॥
बिस्तर बर्तन भीतर रहता, पर चारों बाहर मँडराते ।
जब जाड़े का मौसम आता, दरवाजे पर आग जलाते ॥
शाम-सबेरे तापा करते, कभी-कभी तो रात-रात भर ।
तरह-तरह की बातें करते, बीते हुए दिनों की सुन्दर ॥
काले और कुरूप कोयले, नहा आग में जब मुसकाते ।
एक दूसरे के मुख को लख, तब वे अपनी कथा सुनाते ॥

× × ×

पहले को थी सुध बचपन की, जब वह भेड़ चराया करता ।
बांध मोर के पंख बाल में, बन्सी मधुर बजाया करता ॥

वही सुनाता रोज-रोज वह, कहता वे दिन क्योंकर आएँ ?
सुन कर उसकी बात ! दूसरा...कहता हम क्या मित्र बताएँ ?

× × ×

भेड़ नहीं चराईं हमने, हम तो बस करते थे खेला ।
याद चाँद की होगी कुछ-कुछ, है गवाह अब वही अकेला ।
मैंने कोई हुनर न सीखा, हाय बहुत था मैं अंज्ञानी ।
बस इतना कहने पर उसकी, आंखों में आ जाता पानी ॥
और तीसरा तो रो देता, औ' यह कहकर आहें भरता ।
'वह' गायों को सानी देती, मैं आलस में देखा करता ॥
याद उसे थी निज नारी की, जिसके मरते ही घर डूबा ।
आया था बम्बई शहर में, इस दुनिया से ऊबा-ऊबा ॥

× × ×

चौथा स्वयं किसान चतुर था, और बहुत था हिम्मत वाला ।
याद उसे था उन खेतों की, जिनमें करता था जल डाला ॥
लेकिन कुड़की और कर्ज से, वह भागा बे घर का होकर ।
और यहां बम्बई शहर में, पड़ा हुआ खाता है ठोकर ॥

× × ×

यों बीती बातों की सुध से, आँखों में आँसू छलका कर ।
चारों मिल जब साथ बैठते, लेते दुख से दिल हलका कर ॥

बुद्ध और गौमती

भगवान गौतम बुद्ध-सा ज्ञानी नहीं ।

भगवान गौतम बुद्ध-साध्यानी नहीं ।
गौतमी यह सोचती आई वहाँ ।
ध्यान में थे बुद्ध स्वयं बैठे जहाँ ॥

कह उठी भगवान् कृपा यह कीजिए ।
पुत्र मेरा जिला फिर से दीजिए ।
बुद्ध से यह दीन स्वर न सुना गया ।
देख दुखिया को उन्हें आई दया ।

ओ' कहा—जा ढूँढ़ कोई एक घर ।
मौत जिसमें हो कभी आई न पर ।
एक मुट्ठी अन्न उसका ला मुझे ।
पुत्र तेरा मैं जिला कर दूँ तुझे ॥

गौतमी घर-घर गई यह पूछती ।
गौतमी घर-घर गई यह पूछती ।
पर मिला उत्तर उसे यह द्वार-द्वार ।
मौत तो आई यहां है बार-बार ॥

अन्त में लाचार हो वापस चली ।
और कम उसकी गई हो बेकली ॥

दिन और रात

दिन व रात हैं सखा-सहेली । दोनों की है अजब पहेली ॥
खेल खेलकर "लुकाछिपी" का । हार-जीत दोनों ने झेली ॥
दिन है तेज चमक का नेता । रात तपस्या तम की रानी ॥

दिन जिन फूलों में हँस देता । निसि उनमें ला देती पानी ॥
एक हास्य तो एक रुदन । सुख जग एक, एक दुख घन है ॥
दोनों आते बारी बारी । दोनों से निर्मित जीवन है ॥
सुख में हँसता दुख में रोता । पर धीरज यह कथा दिलाती ॥
अन्त सदा सुख का दिन होता । रात मुसीबत की कट जाती ॥

बादल क्या हैं ?

(१)

देखो देखो आये बादल, भरे हुये हैं तन में यों जल ।
मानों भीगे धोती कम्बल, अपना बढ़ा बढ़ा करके दल ।
भर करके बिजली नस-नस में, लड़ते भिड़ते हैं आपस में ॥

(२)

जय पाता जो वह चिल्लाता, खूब गरजता शोर मचाता ।
किन्तु हार करके जो रन में, अपमानित होता है मन में ।
आँसू बड़े गिराता है वह, मूसलधार बहाता है वह ॥

(३)

पर यह बैर न रहता ज्यादा, जीवन है अति उनका सादा ।
फिर छिन में वे मिल जाते हैं, एकरूपता दिखलाते हैं ॥
या कि सुलह से अति खुश होकर, धारण करके वेश मनोहर ।
इन्द्र धनुष का तोरण तन कर, करते हैं वे उत्सव सुन्दर ॥

(४)

ओ हो मैंने क्या कह डाला, इन्हें न समझो कम्बल काला ।

धोता और न चद्दर जानो, इन्हें भाप के पर्वत मानो।
झरते जिनसे अगणित झरने, आते हरी भूमि को करने।
कुछ ऐसे पहाड़ हैं इनमें, ज्वालामुखी छिपे हैं जिनमें।
कभी भड़क जब वे जाते हैं, आँखें जग की चमकाते हैं।
गड़गड़ गड़गड़ होता है तब, भय से बच्चा रोता है तब॥

(५)

पर यदि होवे खुशी तुम्हारी, मत मानों यह बात हमारी।
समझो इनको प्रभु के बालक, जो है इस दुनिया का पालक।
कूद जलधि में निर्भय होकर, एक मिनट बेकार न खोकर।
भर लाते मटके के मटके, हो अदृश्य रहते हैं लटके।
जभी सुअवसर लख पाते हैं, मन मनमाना जल बरसाते हैं।

(६)

यदि हो तुम भी अच्छे बच्चे, सच्चे और न दिल के कच्चे।
अभिलाषा सेवक बनने की, जग में कुछ करके मरने की।
तब तुमको ये दिख जाएँगे, प्रभु के पुत्र न छिप पाएँगे॥

---:o:---

मुद्रक—महावीर प्रसाद प्रेम प्रेस इलाहाबाद।